तत्त्वार्थ सूत्र सप्तम अध्याय सूत्र ३२-३४

मोक्षमार्गस्य नेत्तारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम्।

ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वंदे तद्गुणलब्धये॥

तत्त्वार्थ सूत्र ग्रंथराज में सप्तम अध्याय के माध्यम से व्रतों का वर्णन चल रहा है। उन व्रतों में जो अतिचार लगते हैं, दोष लगते हैं, उनका भी कथन क्रम-क्रम से किया जा रहा है। पाँच अणुव्रतों के अतिचारों का वर्णन करने के बाद दिग्व्रत, देशव्रत का वर्णन हो चुका है। अब आगे क्रम में अनर्थदंड व्रत आता है। अनर्थदंड व्रत के अतिचार का कथन करने के लिए यह सूत्र नंबर ३२-

Class 28

कंदर्प-कौत्कुच्य-मौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि॥**7.32**॥

अनर्थदंड व्रत के अतिचार

यहाँ पाँच अतिचार बताए जा रहे हैं, जो अनर्थदंड व्रत के है। जो श्रावक अनर्थदंड नहीं करने का व्रत ले लेते हैं, गुणव्रतों के माध्यम से उनके लिए भी ये अतिचार ध्यान रखने योग्य होते हैं। जो सामान्य से भी अपने आप को अनर्थदंड से बचाना चाहते हैं, बिना प्रयोजन होने वाले पाप वृत्तियों से बचाना चाहते हैं, उनके लिए भी यह अतिचार सुनने योग्य और पालन करने योग्य है।

पहला अतिचार कहते हैं- 'कंदर्प' कंदर्प का मतलब होता है- हास्य मिश्रित अशिष्ट वचनों का प्रयोग करना। जो कि आप अक्सर देखा करते हैं कि जो बच्चे स्कूलों में पढ़ते हैं, गलियों में घूमते हैं, इस तरह की प्रवृत्ति अक्सर किया करते हैं। यानि ऐसे अशिष्ट वचनों का प्रयोग जो सभ्य लोगों के द्वारा जिनका उपयोग नहीं किया जाता और जो कहना चाहिए अच्छे व्यक्ति जिन वचनों का उपयोग नहीं करते और जिसमें कुछ न कुछ कामुकता का भी समावेश हो। जिसमें कुछ रागादि की तीव्रता के कारण से ऐसा कामयुक्त

वचन निकले और वह हास्य के साथ मिश्रित हो तो उसको यहाँ पर कंदर्प कहा गया है। इस तरह की जो कंदर्परूप प्रवृत्ति है, यह सभ्य पुरुषों के द्‌वारा तो की ही नहीं जाती। लेकिन फिर भी कुछ निम्न जाति के लोग, असभ्य लोग इस तरीके से किया करते हैं। उन्हीं की संगति में रहते हुए या संस्कार को पा करके इस तरह की प्रवृत्ति करने में जो लोग लग जाते हैं, उनके संस्कार भी पड़े रहते हैं। अब यहाँ आप कहोगे कि जो व्रत लेंगे वे तो सब अच्छे लोग ही व्रत लेंगे और जो व्रत लेंगे तो फिर वे इस तरीके की असभ्य प्रवृत्ति क्यों करेंगे? वह इसलिए हो जाती है क्योंकि वह पूर्व का कुछ संस्कार पड़ा रहता है। जिन्होंने अपने यार दोस्तों में इस तरीके से पहले अशिष्ट वचनों का प्रयोग किया है, बाद में भी वह क्वचित-कदाचित प्रवृत्ति हो जाती है। वह भी न हो, उसको रोकने के लिए इसको अतिचार के रूप में कहा गया है। अतः यह कंदर्प नहीं होना।

दूसरी प्रवृत्ति कहलाती है- 'कौत्कुच्य' इसमें कंदर्प तो mix रहता ही है। साथ-साथ इसमें काय की चेष्टाऐं भी अशिष्ट हो जाती हैं। यानि काय के माध्यम से भी कुछ इस तरह से चेष्टाएँ करना जिससे कि वह व्यक्ति अपने अभिप्राय को दूसरे के अंदर रख भी देता है और दूसरे के अंदर भी कुछ अश्लीलता या कामुकता उसके अंदर प्रविष्ट हो जाती है। इस तरह की प्रवृत्तियों को कौत्कुच्य कहा जाता है। ये सब अनर्थदंड व्रत हैं। आप देखेंगे कि अक्सर जिन्हें कुछ काम नहीं होता है या जो बिना वजह यार-दोस्तों के बीच में घूमते रहते हैं, गलियों में, चौराहों पर खड़े रहते हैं, वे इसी तरीके की प्रवृत्तियाँ अक्सर किया करते हैं और यह कंदर्प कौत्कुच्य से उनके अंदर बिना वजह पाप का बंध होता रहता है। यह बिना वजह होने वाले अनर्थ को रोकने के लिए, पाप बंध को रोकने के लिए इस तरह की प्रवृत्तियों पर काबू पाना उचित होता है। इसलिए यहाँ पर ये व्रत नहीं भी जिनके लिए हैं, उन्हें भी इस प्रवृत्तियों से अपने आप को बचाने का प्रयास करना चाहिए।

फिर कहा जाता है- 'मौखर्य' तीसरा दोष क्या होता है? मौखर्य। मौखर्य जानते हैं? मौखर्य मतलब ज्यादा बकवाद करना, बकवास करना। बोलते हैं न? बहुत ज्यादा बकवास करता रहता है। मतलब कुछ भी बोलता रहता है। जो बकवास होती है इसको हम क्या बोलेंगे? जिसमें कोई भी sense नहीं है और यह भी मौखर्य कई बच्चों की एक habit बन जाती है।

आप देखेंगे कि बहुत सारे बच्चे जब आपस में मिल बैठ जाते है, तो वे कुछ भी नहीं करते, यही करते हैं। ये सब चेष्टाएँ कंदर्प हो, चाहे कौत्कुच्य हो, चाहे मौखर्य हो, ये आपको बच्चों में ही देखने को ज्यादा मिलेंगी। मुखरित होने का नाम है- मौखर्य। अधिकता से बोलना और ऐसा बोलना, जिसमें कोई sense कहीं नहीं निकलता। जब चार चाहे लड़के हो, चाहे लड़कियाँ हो, आपस में बातचीत करते हैं, घंटो-घंटो कुछ भी चीजों पर हंसी-मजाक करते रहते हैं। बिना वजह की बातों में उलझे रहते हैं। एक कहेगा दूसरा हँसेगा, दूसरा कहेगा तीसरा हँसेगा, इस तरह की जो बातें होती हैं, चेष्टाएँ होती हैं और जिनमें कोई भी sense नहीं होता है, इसलिए इसको nonsense कहा जाता है। ऐसी चीजों को भी अनर्थदंड के रूप में जानना चाहिए और इनसे भी बेवजह पाप कर्म का बंध होता है। अक्सर जो गृहस्थ लोग हैं, वे बेवजह बहुत सारा पाप का बंध करते रहते हैं। अगर इन अनर्थदंडों को रोका जाए तो बहुत सारे पाप बंधों से हम बच सकते हैं। जिन चीजों से हमें हासिल तो कुछ नहीं होता, हाथ कुछ नहीं लगता। आप देखेंगे आधा घंटा, एक घंटा आप हंसी मजाक कर करके उठ गए, बाद में आप देखेंगे उससे आपको कुछ नहीं हुआ। बेवजह आपने time खराब किया, आपने अपना दिमाग भी खराब किया। न कोई उससे आपको knowledge मिली, न कोई उससे आपको अच्छी सीख मिली और वह सब जो wastage of time और wastage of energy है। वही सब जो है हमारे लिए पाप का कारण बन जाती है। यह सब तो हुआ ही wastage जो बाहर दिख रहा है। लेकिन भीतर भी पाप का बंध और हो गया। यह पाप का बंध ज्यादा महत्वपूर्ण है। यह ध्यान में रखते हुए हम अपनी चेष्टाओं को समीचीन बनाएँ इसलिए इन अनर्थदंडों के अतिचारों से बचने के लिए ये दोष गिनाए जा रहे हैं।

चौथा दोष होता है- 'असमीक्ष्य अधिकरण' असमीक्ष्य का मतलब होता है, बिना विचार किए हुए और अधिकरण का मतलब होता है- मन वचन काय की प्रवृत्ति करना। यानि जिन प्रवृत्तियों का, जिसका कोई उद्देश्य नहीं है, purposeless activity ऐसा समझ सकते हैं। लेकिन वह बहुत देर तक हम करते रहते हैं। बिना विचार किए हुए भी, मन की भी, वचन की भी और काय की भी प्रवृत्तियाँ होती रहती हैं। मन की प्रवृत्तियों का मतलब है कि जैसे मन में कोई भी खोटे विचार आना और फिर खोटे विचार आए तो हमने उसी तरीके की चीजों में मन को लगाया। अधिकरण का मतलब है कि अधिक-अधिक उसका उसमें

involvement होता चला जाना। मन का खोटी चीजों में बिना मतलब की चीजों में, बिना विचार किए हुए ही, अनेक चीजों में involvement होता चला जाना।

mobile आदि उपकरणों और **apps** के द्वारा पाप का बंध एवं बच्चों पर दुष्प्रभाव

आजकल इस चीज को समझने के लिए आप समझ सकते हो। जब बच्चे mobile पर you tube या instagram ऐसी जो चीजें चल रही हैं, अब इनमें क्या होता है? कोई भी चीज बस आप on कर दो, फिर उसके बाद में आप एक के अंदर एक, एक के अंदर एक, एक के अंदर एक पूरा दिन रात भी आपके लिए छोटा पड़ जाए, इतना material mobiles में भरा पड़ा रहता है। इस तरीके से जो मन, पता तो था ही नहीं कि हमें अपने मन को कहाँ लगाना है? बच्चे केवल mobile में मन को इसलिए लगाए रखते हैं कि उन्हें यह नहीं मालूम होता है कि उन्हें अपने मन को लगाना कहाँ है? जो उसमें आ रहा है, उसमें मन को लगाना है। इसको यहाँ पर कहा जाता है- मन का असमीक्ष्य अधिकरण। बहुत से बच्चे बताते हैं कि जो पहले कुछ भी नहीं देखते थे, जब उन्हें ऐसी चीजें देखने को मिल जाती है, तो फिर उनका मन उसी में लगा रहता है। इससे उनके अंदर तरह-तरह की negativity पैदा होती रहती है क्योंकि उसमें कोई positive चीजें तो होती नहीं। जो भी उसमें material रहता है, वह मन को खोटी प्रवृत्ति में ही लगाता है। कुछ भी तरीके की हँसी-मजाक होगी, कुछ भी तरीके के game होंगे, कुछ भी तरीके की photos होंगे, कुछ भी तरीके के videos होंगे तो वह सब जो है एक के बाद एक, एक के बाद एक, एक के बाद एक, बस चलाते जाओ और खोलते जाओ। बिल्कुल रील की तरह चलती चली जाती है और उसमें से कहीं पर भी, किसी भी चीज से अपने आप को connect कर दो। यह सब जो मन का एक असमीक्ष्य अधिकरण चल रहा है। यह क्या कहलायेगा? बिना विचारे, बिना प्रयोजन के, हमारा कोई purpose नहीं है और हम उसको चलाए जा रहे हैं तो यही तो कहलाता है। किसी भी बच्चे से पूछो कि आप youtube पर खेल रहे हो या instagram पर बैठे हो। आपको बताओ क्या चाहिए? उन्हें चाहिए कुछ नहीं, बस उन्होंने उसको on किया और उससे शुरू हो गए। जो अच्छा लगा उसको देखना शुरू कर दिया। यह कहलाता है... बिना विचार किए हुए। कोई purpose नहीं है, कोई motive नहीं है, कोई हमारा उसमें knowledge gain करने के लिए कोई हमारा अपना कोई उसमें विशेष कोई focus नहीं है। लेकिन बस केवल चीजों को

इस तरह से देखना, जानना मन को उसमें लगाना, की मन में negativity आती चली जाए, मन की यह खोटी प्रवृत्ति अनर्थदंड बन जाती है। यानि बिना वजह बच्चे इन चीजों के माध्यम से पाप के बंध के भागी बनते हैं।
यह मन की एक ऐसी खोटी प्रवृत्ति है कि जिस में अगर एक बार बच्चे को interest आने लग जाता है तो बच्चे ने अगर मान लो, मन से तो अभी देख लिया। अब आगे वचन का भी असमीक्ष्य अधिकरण होगा तो वह उसी से सीख जाएगा। उसमें जैसी हँसी मजाक होगी, जैसे गंदे वचन होंगे तो वह उसी से सीख जाएगा। वैसा ही वह अपने बड़ों से बोलेगा, अपने friend से बोलेगा। वचन का भी असमीक्ष्य अधिकरण इसी के साथ जुड़ जाता है। बिना विचार किए हुए कुछ भी बोलते रहना और फिर उसी की तरह से काय की चेष्टा भी हो जाती है, काय का भी असमीक्ष्य अधिकरण हो जाता है। कोई भी चीज में, अपने शरीर को, अपनी प्रवृत्तियों को, इस तरीके से लगाना कि जिसका कोई हमें उद्देश्य ही नहीं मालूम हो और हम वैसा कर रहे हो। इस तरह का जो भी यह असमीक्ष्य अधिकरण है, यह सब पाप बंध का कारण हो जाता है।

फिर आगे आचार्य कहते हैं- 'उपभोग परिभोग का अनर्थक्य' यानि ऐसी उपभोग और परिभोग की सामग्री, जो हमारे लिए कोई भी अर्थ पूर्ण नहीं है, हमारे लिए बिल्कुल निष्प्रयोजनीय है। उसको भी अपने पास में रखना यह भी अनर्थदंड में आ जाता है। यानि ऐसी सामग्रियाँ जो हमारे लिए कोई उपयोग में नहीं आती हैं लेकिन बहुत सारे वस्त्र है, आभूषण या कोई भी तरीके की खाने-पीने की चीजें, जो हमारे लिए किसी भी तरह के प्रयोजन में नहीं आ रही हैं और वह हमारे पास बहुतायत में रखी हुई है, यह भी एक अनर्थदंड कहलाता है। इस तरह के अनर्थदंडों से बच करके हम बहुत बड़े-बड़े पापों से बच सकते हैं।

पाप से बचकर ही पुण्य कमाया जा सकता है

गृहस्थ लोग कहते हैं कैसे हम अपने पुण्य को बढ़ाये? कैसे हम अपने भाग्य को बढ़ाएँ? सबसे अच्छा तरीका पुण्य कमाने का यह है कि हम पाप से बचें। क्योंकि पाप की प्रवृतियाँ इतनी हैं कि पुण्य कमाने का तो हमारे लिए कभी-कभार विचार आता है। हमें यह विचार

तो कभी नहीं आता है कि हम पाप में प्रवृत्तियाँ कितनी कर रहे हैं? यह जो बिना वजह, बिना प्रयोजन के जो पाप आ रहा है, free में आ रहा है और बहुत ज्यादा तरीके से आ रहा है, यह सारा का सारा पाप अगर हम कहें एक single शब्द में तो वह mobile से आता रहता है। आज के बच्चे जो mobile में सबसे ज्यादा लगे रहते हैं, उनमें पाप प्रवृत्ति इतनी भी बढ़ जाती है कि वह इतने negative हो जाते हैं कि न तो अपने माता-पिता की बात मानते हैं, न उनका पढ़ने-लिखने में मन लगता है। उन्हें केवल बस mobile, instagram जो कुछ भी चीजें चल रही हैं, उन्हीं function में उनका मन लगता है। ऐसी प्रवृत्तियों से उनके अंदर जो negativity आती है, वह negativity उन्हें बहुत चिड़चिड़ा बनाती है। वह फिर किसी की बात नहीं मानते, कोई उनसे mobile छुड़ा लेता है, तो वह उससे नाराज होते हैं और बहुत देर तक भोजन नहीं करते हैं, अनमने बैठे रहते हैं। फिर माता-पिता को आखिर परेशान होकर के उन्हें फिर से वह चीज देनी पड़ती है। यह जो negativity बढ़ रही है, यह सब उनके अंदर का पाप बढ़ रहा है। इसे दूसरे शब्दों में क्या समझ सकते हैं? उनके अंदर पाप बढ़ रहा है।

जब पाप बढ़ेगा तो क्या होगा**?**

जो पुण्य से हमें सुख मिलना चाहिए, पुण्य का सुख हमें नहीं मिलेगा। उनके स्वास्थ्य खराब होंगे, आँखें खराब होगी, पढ़ने में कमजोर होंगे तो उनके लिए आगे दुःख ही दुःख मिलेगा। बच्चों को इन पाप से बचाने के लिए उनको mobile से बचाना चाहिए क्योंकि सबसे ज्यादा अनर्थदंड, बिना प्रयोजन के होने वाला पाप इस mobile से बच्चों के लिए होता रहता है। यह आदत आजकल हर बच्चे में पड़ रही है। इसलिए हर बच्चे के अंदर यह चेष्टा आनी चाहिए कि हम अपने आप को केवल mobile से नहीं बचा रहे हैं, हम अपने आप को पाप के बंध से बचा रहे हैं।

Class 29

मन से जो हम पाप कर रहे हैं, बिना बजह से हम खोटी प्रवृत्तियों में लगे हुए हैं। उस पाप को बचाने के लिए हमें उस mobile से अपने को हटाना पड़ेगा, उससे दूर रखना पड़ेगा तभी आपके बच्चों का mobile के बिना पढ़ने में मन लग सकता है या उनके कोई घर के काम में मन लग सकता है। अन्यथा आप देखेंगे जिन बच्चों को mobile की ज्यादा आदत पड़ रही है, न वे कोई काम कर रहे हैं, न कोई पढ़ रहे हैं, उल्टा घर में चिल्ला-चोट और कर रहे हैं। समझे? हो रहा है न ऐसा? ये सब प्रवृतियाँ कहाँ से आ रही हैं? ये सब इन्हीं सूत्रों के अर्थ नहीं समझने के कारण से आ रही हैं। आज के समय में इन सूत्रों का यही अर्थ है कि हम अपने बच्चों को अनर्थदंड से बचाएँ और स्वयं भी अपने आप को अनर्थदंड से बचाएँ तब हम पाप से बचकर के पुण्य में प्रवृत्ति कर सकते हैं। यह हुए अनर्थदंड व्रत के अतिचार दोष।

सामायिक व्रत के अतिचार

इसके बाद में आचार्य कहते हैं- जो व्रती लोग हैं, सामायिक करते हैं। सामायिक करने का एक उनका व्रत होता है। अगर वह व्रत प्रतिमा लिए हैं तो सुबह शाम उन्हें दो बार नियम से सामायिक करना आवश्यक होता है। सामायिक का मतलब होता है... समता भाव धारण करना। जो हमने सुबह से शाम तक लोगों से मेलजोल किया उनके साथ में राग-द्वेष हुए, उस सब प्रवृत्तियों को छोड़कर के, उन सब राग-द्वेष के भावों को छोड़ कर के, सब कषायों को छोड़ करके, मन को निर्मल बना करके, थोड़ी देर के लिए समभाव में आना और उस समता भाव में आने पर, सामायिक करने पर भी कुछ अतिचार लग जाते हैं, कुछ दोष लग जाते हैं। उनका जिक्र यहाँ किया जा रहा है -

योगदुष्प्रणिधानानादर-स्मृत्यनुपस्थानानि॥**7.33**॥

यहाँ सामयिक व्रत के अतिचार बताए जाते हैं। योग का दुष्प्रणिधान, दुष्प्रणिधान का मतलब होता है...अन्यथा प्रवृत्ति करना। योग कहीं का कहीं चला गया। योग का मतलब होता है- मन, वचन और काय। इसलिए यहाँ पर तीन अतिचार गर्भित हो गए। इस योग दुष्प्रणिधान में यानि मन की दुष्प्रवृत्ति होना, वचन की दुष्प्रवृत्ति होना और काय की दुष्प्रवृत्ति होना। आप देखेंगे कि जैसे ही आप ध्यान या सामायिक करने बैठते हैं, समभाव

में आने के लिए आप शांत होकर के बैठते हैं, आपका मन कहीं न कहीं किसी आर्त ध्यान में उलझ जाता है। कोई हमारे लिए इष्ट का वियोग हुआ, कोई अनिष्ट का संयोग हुआ, हमारी स्मृति सीधी वहाँ चली जाती है। बहुत देर तक हम अपने मन को बिना विचार के उसमें उलझाए रखते हैं। यह जो मन का उलझना है, जिन विषय कषायों में जिनसे हमें कुछ मतलब नहीं निकलना है। उस मन की उस प्रवृत्ति को यहाँ पर मन का दुष्प्रणिधान कहा जाता है। सामायिक के समय पर ऐसा भी हो सकता है, होता है कि आप सामयिक की क्रिया तो कर रहे हैं। जैसे सामायिक के लिए हमें दिग्वंदना करना है या हमें भक्ति पाठ पढ़ना है, तो वह भक्ति पाठ भी पढ़ा जाता है और साथ-साथ में मन का दुःप्रणिधान भी चलता रहता है। क्योंकि मन जहाँ उलझा है वह मन वहाँ सोच रहा है और जो याद है वह उसको देख करके बस पढ़े जा रहा है। यह सामायिक मन के दुष्प्रणिधान से शुरू होती है। फिर वह वचन के दुष्प्रणिधान में भी चली जाती है कि वचन का दुष्प्रणिधान यह हो गया कि उस सामायिक के जो भी पाठ थे या जो कुछ भी उसके दंडक वगैरह जो प्रारंभ में सामायिक करने के पहले पढ़े जाते हैं, भक्ति आदि के जो पाठ हैं, उनमें भी उसके वचन में तो कुछ का कुछ चलता रहता है और वह पाठ दूसरा करता रहता है और उसे पता ही नहीं होता है कि पाठ कब पूरा हो जाता है। आपको अपनी भाषा में समझने के लिए कभी ऐसे देखना, कोई आप विनती पढ़ने बैठ जाओ, भक्तामर पढ़ने बैठ जाओ तो पहला काव्य तो आप शुरू कर देते हो, फिर बाद में आप सिर्फ पढ़ते रहते हो। जब अंत होता तो फिर आपको याद होता है, हाँ! अब फिर अंत हो गया। स्तोत्रस्त्रजं.. सब आया जैसे सामने तो बस फिर आपको ध्यान आ जाता है कि हाँ समाप्त हो गया। इसी तरीके से कई लोगों की सामायिक शुरू होती है और अंत हो जाती है। पता नहीं पड़ता है कि बीच में क्या हुआ? बीच में सब मन, वचन, काय का दुःप्रणिधान चला जाता है।

काय का दुःप्रणिधान

काय का भी इस तरीके से चेष्टाएँ, उन्हें पता ही नहीं क्या कर रहे हैं? कायोत्सर्ग करना है तो कायोत्सर्ग करने के लिए खड़े हैं। हमें कायोत्सर्ग में कितनी श्वासोच्छवास पर ध्यान देना है? या हमें कितनी बार मंत्र पढ़ना है? पढ़ लिया तो यही पता नहीं है कितनी बार पढ़ लिया? कितनी श्वासोच्छवास हो गए? कितनी देर हो गई? कुछ भी जो ध्यान नहीं रहना

या उसको करते हुए भी, कुछ न कुछ और खोटी प्रवृत्ति कर लेना। जैसी इच्छा आई वैसा खुजा लिया। जैसी इच्छा आई वैसे खड़े हो गए, जैसी इच्छा आई वैसा जो है कोई भी शरीर की प्रवृत्ति कर ली। यह सब उस सामायिक का दुष्प्रणिधान कहलाता है। आचार्य कहते हैं- ये तीन प्रकार के जो दुष्प्रणिधान हैं, ये सामायिक में दोष लगाते हैं। सामायिक को नष्ट तो नहीं करते लेकिन ये सामायिक में दोष लगाते हैं। दोष का मतलब यह हुआ कि आपके अंदर सामायिक का भाव तो है लेकिन आप उस सामायिक के भाव में आ नहीं रहे हो। सामायिक करने के लिए आपने तैयारी तो शुरू कर दी लेकिन आप सामायिक की जो व्यवस्थित स्थिति होती है, उसको आप touch नहीं कर रहे हो। वह नहीं करने के कारण से वह हमारे अपने स्वभाव में आना जो हमारे लिए आवश्यक था, वह नहीं होने के कारण से वह उसका दोष बन जाता है। कुछ-कुछ बीच में हो जाता है, पूरा नहीं होता अच्छे ढंग से तो भी वह दोष ही तो कहलाएगा। इसलिए ये तीन दोष सामायिक के बताए गए।

अनादर

चौथा है…अनादर। अनादर का मतलब होता है…आदर नहीं होना सामयिक की क्रियाओं में या उत्साह नहीं होना। करना इसलिए है क्योंकि नियम है और उत्साह इसलिए नहीं है क्योंकि मन दूसरी जगह पर लगा हुआ था। काम दूसरे करने थे, उससे मन को हटाना है क्योंकि वह भी करना है। नहीं करेंगे तो फिर हमने सामायिक नहीं की, ऐसा मन में फिर एक और दूसरा विकल्प चलता रहेगा। वह सामायिक करने बैठ जाना लेकिन आदर नहीं होना। जो हमें सामायिक में करना है, उस तरफ ध्यान नहीं होना या हमारे लिए सामायिक के समय पर किसी भी तरह का उत्साह नहीं आना। उदासीन हो करके बैठ जाना और मन को किसी भी तरीके से राग-द्वेष में जो उलझ रहा है, उससे बचाना नहीं तो यह उसका अनादर कहलाता है। माला तो फेर रहे हैं या कोई भी चीज अपने पाठ आदि को ले करके बैठ तो गए। लेकिन दिमाग दूसरी जगह लगा हुआ है। दिमाग बार-बार जो है उसके प्रति उत्साहित नहीं है कि मैं अगर 'णमो अरिहंताणं' पढ़ रहा हूँ तो णमो अरिहंताणं पर ही ध्यान दूँ। आदर इसलिए नहीं क्योंकि हमारे अंदर उस समय पर मन अच्छा नहीं है, मन में कोई उत्साह नहीं कि सामायिक करने से भी कुछ होता है कि नहीं होता है? ऐसा लगता है कि अभी यह time तो हमें पूरा निकालना ही है। time निकालने वाली बात आ जाए तो

समझ लेना सामायिक का अनादार नाम का यह अतिचार लग रहा है, time पूरा करना है। बैठ गए, time भी देखते रहते हैं। चार बार time देख लिया, पूरा हो गया कि नहीं हो गया तो यह भी उसके अनादर के कारण से ही होता है। अगर आदर भाव के साथ होगा तो time अपने आप ज्यादा निकल जाएगा, पता ही नहीं पड़ेगा। इतनी अच्छी सामायिक हो जाएगी तो उसमें आदर उत्साह के साथ होगा तो बार-बार घड़ी भी देखने की जरूरत नहीं पड़ेगी। यह सब अनादर भाव जो करते हैं उनको पता रहते हैं। इस तरीके के अनादर भी सामायिक में आते हैं, ये सब भी उसके दोष कहलाते हैं।

फिर आचार्य कहते हैं- 'स्मृति अनुपस्थापनानी' यानि स्मृति का ही उपस्थित नहीं रहना। हम करने तो कुछ और बैठे थे, सोच करके कुछ और बैठे थे। आज हम सामायिक में यह चिंतन करेंगे, आज हम सामायिक में बारह भावना का चिंतन करेंगे। आज हम सामायिक में मैत्री आदि भावना भाएँगे। आज हम सामायिक में णमोकार में मन लगाएँगे लेकिन थोड़ी देर बस दो-पाँच मिनट शुरू हुआ और उसके बाद तो पता नहीं क्या हुआ? स्मृति न जाने कहाँ-कहाँ चलती रही? यह कहलाता है…lack of concentration. इसमें क्या है? स्मृति का अनुपस्थापन का मतलब है concentration नहीं है। हमारा जो mind है उस mind का हमें control नहीं है।

मन का दुःष्प्रणिधान और स्मृति नहीं रहना में अन्तर

जो पहले बताया था मन का दुःष्प्रणिधान उसमें तो मन खोटा-खोटा सोच रहा है। इन दोनों चीजों में अंतर है…मन का दुःष्प्रणिधान और एक स्मृति नहीं रहना। स्मृति कहीं की कहीं चली जाना, यह अलग चीज होती है और मन में खोटे-खोटे विचार आना यह अलग चीज होती है। इन दोनों को यहाँ पर अलग-अलग रूप में लेना चाहिए। स्मृति अनुपस्थापन का दूसरा अर्थ यह भी होता है कि स्मृति नहीं रहना कि हमें करना क्या था? कौन सा पाठ पढ़ना था? कौन सी हमें क्रिया करनी थी? कौन सी हमें आवर्त करने थे? कुछ भी याद नहीं रहना और हमने कितना कर लिया है और कितना बाकी है? यह भी ध्यान नहीं रहना। कई बार मान लो कोई क्रियाएँ एक साथ, चार क्रियाएँ करनी है या दो कोई हमें भक्तियाँ पढ़नी है या हमें किसी भी तरीके का आवर्त करने है, तो वह हमें ध्यान नहीं रहना। किस दिशा में

कितने कर लिए है? कितना हमने पाठ पढ़ लिया? कोई स्मृति ही नहीं रहना या सामायिक की ही कभी-कभी स्मृति नहीं रहना कि हम भूल ही गए, हमें सामायिक भी करना था। यह भी एक उसी में आ जाएगा। इस तरीके से यह स्मृति नहीं रहना भी एक सामायिक का दोष माना जाता है।

इसके आगे आचार्य कहते हैं- एक व्रत आता है…प्रोषधोपवास। नाम सुना है? क्या बोलते हैं? प्रोषधोपवास! उपवास के साथ भी प्रोषध करके उसको प्रोषधोपवास के रूप में जोड़ा गया है। जो प्रोषधोपवास व्रत लिए रहते हैं, वे अष्टमी चतुर्दशी को जघन्य, मध्यम या उत्कृष्ट रूप से किसी न किसी तरीके से प्रोषधोपवास करते हैं। उसमें भी यह विधि रहती है कि जैसे उत्कृष्ट तो उपवास के साथ होता है…प्रोषधोपवास। जो अष्टमी या चतुर्दशी को पूर्ण चारों प्रकार के आहार के त्याग के साथ होता है। मध्यम में ऐसा भी हो जाता है कि उसमें वह कुछ थोड़ा सा एक time जल ले ले, यह मध्यम में आ जाता है और जघन्य में आ जाता है कि बिल्कुल कोई छोटा सा नीरस भोजन ले ले एक time या कोई भी बिना कहना चाहिए अन्न के भी ले ले, कुछ थोड़ा सा दूध पानी ले ले तो यह जो है इस तरीके का निर्विकृति रूप में आहार नीरस आहार भी अगर वह ले लेता है तो यह जघन्य प्रोषधोपवास में आ जाता है। इस प्रोषधोपवास में भी क्या होता है कि शरीर में थकान हो जाती है, भूख भी लगती है, प्यास भी लगती है, शरीर ढीला हो जाता है, कुछ भी करने की फिर इच्छा सी नहीं रह जाती है। उसमें उसे अपनी क्रियाएँ तो करनी होती है। सामायिक भी करना है, व्रती है तो पूजा भी करना है। अतः ये सब क्रियाओं को करते हुए, अपने शरीर की भी क्रियाओं को करते हुए, उसके लिए जो प्रमाद आता है, उसके कारण से उसको उस प्रोषधोपवास के व्रतों में दोष लगना कहा जाता है। वे क्या हैं? वह पाँच अतिचार है जो यहाँ बताए जा रहे हैं -

अप्रत्यवेक्षिता-प्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादर-स्मृत्यनुपस्थानानि ॥**7.34**॥

ये पाँच दोष हैं। क्या कहते हैं? 'अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जित' यह शब्द जो है, आपको उत्सर्ग के साथ भी लगाना है, आदान के साथ भी लगाना है और संस्तरोपक्रमण इसके साथ भी लगाना है। तीन चीजों के साथ में इस शब्द लगाना है, यह पद जोड़ना है। कौन सा पद?

‘अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जित’ और इस पद में भी दो चीजें हैं- अप्रत्यवेक्षित का मतलब होता है…देखना नहीं। प्रत्यवेक्षण मतलब देखना नहीं। उसको ढंग से observe नहीं करना और अप्रमार्जित का मतलब होता है…उसका ढंग से परिमार्जन नहीं करना। वहाँ से जीव-जंतुओं को हटाने के लिए जो भी हमें कोमल कपड़े से या किसी कोमल और भी वस्तु से, हम उन जीव-जंतुओं को हटाते हुए, उस वस्तु को हम ग्रहण करें या कोई भी क्रिया करें, वह वहाँ पर प्रमार्जन के साथ नहीं करना। यह भी उसके दोष में आ जाता है। बिना देखे हुए और बिना शोधे हुए, इसको क्या कह सकते हैं? बिना शोधे हुए। शोधन का मतलब? थोड़ा उसका प्रमार्जन कर लेना, परिमार्जन कर लेना। कोई भी क्रिया होती है, व्रती कुछ भी चीजों का ग्रहण करता है या उत्सर्ग करता है, तो उसमें उस स्थान का वह देखना भी करता है और शोधन भी करता है।

Class 30

अतः उत्सर्ग में आ जाता है… हम जिस किसी भी शरीर आदि की क्रियाओं के साथ में शरीर के मल आदि का जो त्याग करते हैं, वह उत्सर्ग में आ जाता है। वह भी देखभाल के करना और आदान में आ जाता है…कोई भी वस्तु है जो हम ग्रहण कर रहे होते हैं, किसी भी चीज को उठाना है, रखना है, पहनना है, ओढ़ना है। ये सब चीजें हमारे जो काम में आती हैं, उनमें भी थोड़ा सा देखभाल कर चलना और देखभाल करके शोधन करके उनका उपयोग करना। हर चीज को शोधन करके, देखभाल करके ग्रहण करना…यह आदान कहलाता है। आदान मतलब ग्रहण करना। यह दूसरा है- ‘अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जित’ अगर हमने आदान किया है तो यह प्रोषधोपवास का दोष कहलाता है। अब यह दोष इसलिए हो जाता है क्योंकि जिसने प्रोषधोपवास किया है, उसके लिए इतनी शिथिलता आ जाती है कि वह यह सोचता है कि अब कैसे भी सुबह हो जाए? कैसे भी आहार की बेला आ जाए? यह जो है हमारे लिए जब तक आहार ग्रहण करने में नहीं आएगा तब तक हमारे शरीर में जान नहीं आएगी। जान नहीं आएगी तब तक उन क्रियाओं में भी जान नहीं आएगी। जो इन क्रियाओं में जान नहीं आ रही है, यही इस व्रत का दोष कहलाएगा।

हर एक क्रिया से पुण्य का आस्रव कैसे कर सकते हैं?

आचार्य कहते हैं कि आपको कोई भी चीज ग्रहण करना है तो आप उसमें भी थोड़ा सा अपना यह ध्यान बना कर के रखे, देख करके और शोध करके, ग्रहण करे। ये चीजें अक्सर घरों में पहले भी लोग किया करते थे। जैसे मान लो hanger होते हैं, कपड़े टँगे रहते हैं या किसी भी कील इत्यादि पर आपके कपड़े टँगे हुए हैं, कुछ भी है। पहले के लोग कभी भी कपड़ा उठाते थे तो कपड़ा उठाने के बाद भी थोड़ा सा उसको हिलाते थे। आज आपके लिए सब सावधानियाँ बिल्कुल बची ही नहीं हैं। कोई सिखाता ही नहीं है और ये सब सावधानियाँ ही यहाँ पर लिखी हुई हैं कि इन सावधानियों की कमी होने का नाम ही आपके अंदर दोष आ रहा है। कोई भी चीज है…आप कोई भी कपड़ा है या कोई भी वस्तु है, उसको आप ले रहे हो, उठा रहे हो, थोड़ा सा उसको पहले देख लो और देखने से पहले उसका शोधन कर लो। अब आप अपनी shirt पहन रहे हो या pant पहन रहे हो और वहाँ पर वह दो दिन से पड़ी हुई थी या टंगी हुई थी और उसमें न जाने कुछ भी, कभी-कभी तो छिपकली भी चली जाती है। कोई भी cockroach बैठ सकता है। कोई भी चीज वह वस्त्र के अंदर चली गई। आपने तुरंत उसे उठाई, पहन ली। जब वह शरीर में काटने लगा, चिपकने लगा तब आपने उसको हटाया। चींटी का तो कोई ख्याल ही नहीं है। कितनी आ जाती होंगी और कितनी मर जाती होंगी लेकिन अगर आप थोड़ा सा भी इन चीजों का ख्याल करें तो इससे भी आप अपने अंदर हर एक क्रिया से पुण्य का आस्रव कर सकते हो। यह ऐसा नहीं है केवल व्रती के लिए ही है। कोई भी जो सामान्य से कोई भी तरीके का householder है, वह किसी भी तरीके की अपनी क्रिया करें, अगर देखभाल करके करता है थोड़ा सा हिला करके, शोधन करके करता है, तो उसके लिए पुण्य का आस्रव होता है, पाप से बच जाता है।

‘जदं चरे’

आप कहीं भी बैठते हो, बैठने से पहले सोच लो कि यह फर्श है मान लो आप इस पर बैठे हो। इस पर कोई भी mat बिछी हुई है या कोई भी दरी इत्यादि बिछी हुई है तो वह कितने दिनों से बिछी हुई है, इसमें कोई भी जीव जा सकता है। रातभर बिछी रही उसके अंदर कोई छिपकली चली गई हो। आप सुबह आए उठकर के सीधे और उसके ऊपर बैठ गए। कुछ भी

हो सकता है। चीजों को सावधानी से उपयोग में लाना, यह अपने आप में बहुत बड़ा पाप बंध के बचाने का एक कारण है और इससे पुण्य का आस्रव होता है। घर बैठे-बैठे जो लोग यह चाहते हैं, हमारे लिए पुण्य का बंध इन क्रियाओं में कैसे हुए? क्रियाएँ तो सब पाप का कारण है। अगर उन्हीं क्रियाओं में हम सावधानी बरत ले तो वे सब क्रियाएँ हमारे लिए पुण्य आस्रव के भी कारण बन जाएगी। हमें भोजन करना है। कोई भी वस्तु को उठाना है या हमें कोई भी वस्त्र पहनना है, किसी भी तरीके की कोई क्रिया करना है, हर क्रिया में हम एक सावधानी रखें। इसे आचार्यों ने कहा…'जदं चरे' क्या बोला? जदं मतलब यत्न पूर्वक, प्रयत्न के साथ में, सावधानी पूर्वक आप चरो। चरने का मतलब हर तरीके की क्रिया करो। जब यह प्रवृत्ति आ जाती है तो पुण्य आस्रव भी होने लग जाता है और उन्हीं क्रियाओं से जो पाप का बंध हो रहा था वही हमारे लिए पुण्य आस्रव के काम में आ जाते हैं। यह बड़ी सिर्फ भीतर की थोड़ी सी सावधानी के माध्यम से यह पाप और पुण्य का यह balance बनने लग जाता है। उसी क्रिया से पाप हो रहा है, उसी से पुण्य भी है। वस्त्र आपने उठाया थोड़ा सा हिला लिया, देख लिया, सावधानी पूर्वक अपने शरीर पर डाल लिया तो पुण्य का आस्रव हो गया और कुछ नहीं है। जल्दी-जल्दी बस ऐसे ही कर लिया पाप का आस्रव हो गया। बताओ आपको नुकसान क्या है? घाटा क्या है? अगर हम थोड़ी सी सावधानी रखे तो न तो उसमें कोई घंटों लगते हैं, न मिनटों लगते है, बस! एक चेष्टा है। कोई भी चीज हम उठा रहे हैं, रख रहे हैं, उसको हम देखभाल करके प्रयोजन में ले।

ये तीन दोष उत्सर्ग, आदान और तीसरा है- संस्तर का उपक्रमण। संस्तर बोलते हैं…बिस्तर आदि। अब जब उपवास हो जाएगा, हालत खराब हो जाएगी तो फिर बिस्तर इत्यादि भी कौन घरी करें? कौन यहाँ से उठा कर के वहाँ रखे? अब आज के लिए तो यह भी नहीं होता। आज तो बिस्तर चौबीसों घंटे पड़े रहते हैं, बिस्तर उठते ही नहीं है। पहले तो यह भी होता था कि लोग बिस्तर अपने उठा करके सुबह रखते थे। फिर जब उनको दूसरे दिन बिछाना होता था तो देख शोध करके बिछाते थे। फिर उपयोग में आने के बाद फिर उसको उठा कर रख देते थे। इससे जीव हिंसा भी कम होती है। अगर आपके लिए बिस्तरों का उपयोग भी करना होता है, तो इन बिस्तरों पर भी आप को ध्यान पूर्वक उनका उपयोग करना। उस पर भी जो है हमारा प्रमाद नहीं होना चाहिए। उन पर भी देख शोध करके प्रवृत्ति

होनी चाहिए। यह संस्तर का उपक्रमण यह तीसरा दोष कहा गया। अगर हम उसको देखभाल करके करते हैं तो दोष नहीं है और बिना देखे, बिना शोधे करते हैं तो वह दोष हो जाता है।

इसमें भी सामायिक की तरह एक चौथा और पाँचवाँ जो अतिचार है, वह common है। अनादर जैसे सामायिक में था वैसे ही प्रोषधोपवास की क्रिया में भी अनादर होना। अनादर मतलब उसके प्रति कोई भी बहुमानता का भाव नहीं रहना या उत्साह नहीं होना कि हमें ऐसा करने से बहुत कुछ कर्म के निर्जरा होगी। यह हमारे लिए व्रत है, तो हम इसको बहुत भावों के साथ करें। इस तरीके की भीतर से मानसिकता के अभाव का नाम ही अनादर कहलाता है। इस तरह का जो अनादर होगा यह भी दोष है और 'स्मृति का चला जाना' यह ध्यान नहीं रहना कि हमें उपवास करना था कि नहीं करना था? प्रोषध करना था कि नहीं करना था? अथवा प्रोषध करने के बाद में कौन-कौन सी हमें क्रियाएँ करनी थी? किस समय पर हमें किस तरीके से उस प्रोषधोपवास को अगले दिन तक ले जाना था? क्या-क्या हमें स्वाध्याय आदि करना था? कैसे हमें दूसरे दिन पूजन आदि भी करना था? यह सब हमें कुछ भी ध्यान नहीं रहना और हमारे लिए जैसे तैसे हुए विचार करते हुए दूसरे काम करते हुए वह प्रोषधोपवास पूरा हो जाना तो यह सब भी जो है उसका एक दोष बन जाता है और इसलिए यह दोष क्या कहे जाते हैं? उस प्रोषधोपवास के सब दोष बन जाते हैं। अतः यहाँ पर आप को यह ध्यान में रखना है कि कोई भी तरीके का हम जब व्रत लेते हैं तो उस व्रत में हमारा पहली बार तो उत्साह रहता है। करने में दो-चार बार उत्साह रहता है लेकिन जब वह व्रत routine में आ जाते हैं तो भी उत्साह उतना ही बना रहना चाहिए। जब यह उत्साह में कमी आने लगे तो फिर यह विचार में आना चाहिए कि यह व्रत हमारे लिए विशुद्धी को बढ़ा नहीं रहे हैं। जबकि व्रतों से क्या होना चाहिए था? विशुद्धि बढ़नी थी, कर्म की निर्जरा बढ़नी थी। वह कर्म के निर्जरा बढ़ेगी तभी बढ़ेगी, जब हमारा उस व्रत के प्रति आदर, उससे हमारी स्मृति, जो जिस तरीके से जुड़ी होनी चाहिए, वह जुड़ी रहेगी। तब वह हमारे लिए व्रत निरंतर जो है कर्म के निर्जरा का कारण बना रहेगा और प्रमाद के कारण से जब इस तरह की वृत्ती एक बार बन जाती है और हम उसे control नहीं कर पाते हैं तो फिर धीरे-धीरे वह वृत्ति प्रमाद में और बढ़ती चली जाती है। फिर व्रत केवल ऊपर-ऊपर से

रह जाते हैं, बाहर उस रूप से हो जाते हैं और भीतर से जो भाव होना चाहिए वह भीतर से चला जाता है।

इन क्रियाओं को हमेशा एक ढंग से करना यह सबसे कठिन काम होता है। जो व्रत लेने में उत्साह रखते हैं, वह यह भी सोच लें कि जीवन पर्यंत तक हमें ऐसा ही करना है। जो हमने व्रत लिया है उसमें जिस तरीके का भाव है, वह हमें जीवन पर्यंत तक वैसा ही बना करके रखना है, जैसा लेते समय हमारा होता है। इस तरीके के उत्साह में जो लोग रहते हैं, उनके लिए व्रतों का पालन अच्छे ढंग से होता है। इसलिए जो भी गृहस्थ व्रत लेते हैं, प्रतिमाएँ लेते हैं, आगे बढ़ने की इच्छा रखते हैं, वह यह ध्यान में रखें कि यहाँ पर नया-नया उत्साह हमें खुद अपने अंदर पैदा करना पड़ेगा। बाहर की चीजें तो वही रहेंगी लेकिन वह सब क्रियाएँ हमारे लिए ऐसा न लगे कि यह सब routine हो रहा है। routine तब लगता है जब उनके पीछे हमारे अंदर कोई विशुद्धी का भाव नहीं जुड़ा होता है। वही क्रियाओं से जब भीतर बहुत शांति, बहुत उत्साह, बहुत विशुद्धि रहती है, तो वहीं क्रियाएँ हमारे लिए routine नहीं होती हैं। उनसे हमको बहुत ज्यादा लाभ मिलता रहता है। व्रतों के माध्यम से routine तो बनता है लेकिन भीतर जो भावों की विशुद्धि है, वह निरंतर बढ़ती चली जाती है। यह ध्यान में रखते हुए व्रती लोग व्रत ले, प्रतिमा ले ताकि उन्हें जीवन में कभी अनुत्साह पैदा न हो। एक बार जिस तरीके से हम किसी चीज को ग्रहण करने के लिए उत्साहित होते हैं, वैसा ही उत्साह हमारा जीवन पर्यंत तक बना रहना चाहिए। कुछ व्रतों के अतिचार और बचे हैं, वह आपको बाद में बताए जाएँगे।